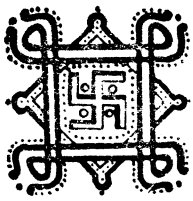

साधना, साहित्य और इतिहास के क्षेत्र में विशिष्ट योगदान

□ श्री लालचन्द जैन

साधना का क्षेत्र :

जैन साधु-साध्वियों की दिनोंदिन हो रही कमी और भारत जैसे विशाल क्षेत्र में जनसंख्या के अनुपात में बढ़ रही जैनियों की संख्या के लिये जैन धर्म-दर्शन का प्रचार-प्रसार पूरा न हो सकने के कारण आचार्य प्रवर ने सोचा कि साधु-साध्वियों और गृहस्थों के बीच एक ऐसी शांति सेना को तैयार करना चाहिये जो प्रचारकों के रूप में देश के कोने-कोने में जाकर जैन धर्म-दर्शन का प्रचार-प्रसार कर सके। जब आचार्यश्री का चातुर्मास उज्जैन में था (लगभग सन् १९४३ का वर्ष) तब धार से एक श्रावक ने आकर कहा कि हमारे यहाँ कोई साधु-साध्वी नहीं है। यदि आप किसी को पर्युषण में व्याख्यान देने भेज सकें तो बड़ी कृपा होगी। उस समय मैं आचार्यश्री के पास रहकर जैन धर्म और प्राकृत भाषा का अध्ययन कर रहा था। आचार्यश्री ने मुझे आज्ञा दी कि मैं धार नगरी में जाकर पर्युषण करवाऊँ। यद्यपि मैं नया-नया था तथापि आचार्य श्री की आज्ञा को शिरोधार्य कर मैं गया और वहाँ पर्युषण की आराधना आचार्य श्री की कृपा से बहुत ही शानदार हुई। वहाँ के श्रावकजी ने वापस आकर आचार्य श्री को पर्युषण की जो रिपोर्ट दी उससे आचार्यश्री का स्वाध्याय संघ की प्रवृत्ति चलाने का विचार दृढ़ हो गया और दूसरे ही वर्ष भोपालगढ़ में स्वाध्याय संघ का प्रारम्भ हो गया।

आज तो देश के कोने-कोने में स्वाध्याय संघ की शाखाएँ खुल चुकी हैं। सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल जयपुर के तत्त्वावधान में जैन स्थानकवासी स्वाध्याय संघ का मुख्य कार्यालय जोधपुर में कार्य कर रहा है। अनेक स्वाध्यायी भाई-बहिन देश के कोने-कोने में जाकर साधु-साध्वी रहित क्षेत्रों में पर्युषण की आराधना करवाते हैं। जब आचार्यश्री का चातुर्मास इन्दौर और जलगाँव में था तब इन्दौर में मध्यप्रदेश स्वाध्याय संघ की तथा जलगाँव में महाराष्ट्र स्वाध्याय संघ की स्थापना हुई। उसके बाद तो जैसे-जैसे आचार्य प्रवर का विहार होता गया, वैसे-वैसे उन-उन राज्यों में स्वाध्याय संघ की शाखाएँ खुलती गईं। आज तो कर्नाटक और तमिलनाडु जैसे दूरदराज के राज्यों में भी स्वाध्याय संघ की शाखाएँ हैं। साधना के क्षेत्र में स्वाध्याय को घर-घर में प्रचारित करने की आचार्यश्री की बहुत बड़ी देन है।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

आचार्यश्री के पास जब भी कोई दर्शन करने आता तो आचार्यश्री का पहला प्रश्न होता "कोई धार्मिक पुस्तक पढ़ते हो ? कुछ स्वाध्याय करते हो ?" यदि दर्शनार्थी का उत्तर नहीं में होता तो उसे कम से कम १५ मिनिट स्वाध्याय का नियम अवश्य दिला देते ।

स्वाध्याय एक ऐसा आंतरिक तप है जिसकी समानता अन्य तप नहीं कर सकते । 'उत्तराध्ययन सूत्र' में महावीर ने फरमाया है—'सज्झाएणं समं तवो नावि अत्थि नावि होई ।' स्वाध्याय के समान तप न कोई है न कोई होगा । 'सज्झाए वा निउत्तेणं, सव्व दुक्ख विमोक्खणे ।' स्वाध्याय से सर्व दु:खों से मुक्ति होती है । 'बहु भवे संचियं खलु सज्झाएण खवेई ।' बहु संचित कठोर कर्म भी स्वाध्याय से क्षय हो जाते हैं । भूतकाल में जो अनेक दृढ़धर्मी, प्रियधर्मी, आगमज्ञ श्रावक हुए हैं, वे सब स्वाध्याय के बल पर ही हुए हैं और भविष्य में भी यदि जैन धर्म को जीवित धर्म के रूप में चालू रखना है तो वह स्वाध्याय के बल पर ही रह सकेगा । आज आचार्यश्री की कृपा से स्वाध्यायियों की शांति सेना इस कार्य का अंजाम देशभर में दे रही है ।

आचार्यश्री ने देखा कि लोग सामायिक तो वर्षों से करते हैं किन्तु उनके जीवन में कोई परिवर्तन नहीं होता । जीवन में समभाव नहीं आता, राग-द्वेष नहीं छूटता, क्रोध नहीं छूटता, लोभ नहीं छूटता, विषय-कषाय नहीं छूटता । इसका कारण यह है कि लोग मात्र द्रव्य सामायिक करते हैं । सामायिक का वेष पहनकर, उपकरण लेकर एक स्थान पर बैठ जाते हैं और इधर-उधर की बातों में सामायिक का काल पूरा कर देते हैं । अत: जीवन में परिवर्तन लाने के लिए आपने भाव सामायिक का उपदेश दिया । आप स्वयं तो भाव सामायिक की साधना कर ही रहे थे । आपका तो एक क्षण भी स्वाध्याय, ध्यान, मौन, लेखन आदि के अतिरिक्त नहीं बीतता था । अत: आपके उपदेश का लोगों पर भारी प्रभाव पड़ा । आपने सामायिक लेने के 'तस्स उत्तरी' के पाठ के अन्तिम शब्दों पर जोर दिया । सामायिक 'ठाणेणं, मोणेणं, झाणेणं' अर्थात् एक आसन से, मौन पूर्वक और ध्यानपूर्वक होनी चाहिये । यदि इस प्रकार भावपूर्वक सामायिक की जाय, सामायिक में मौन रखें, स्वाध्याय करें और आत्मा का ध्यान करें तो धीरे-धीरे अभ्यास करते-करते जीवन में समभाव की आय होगी, जिससे जीवन परिवर्तित होगा । इस प्रकार आपने भाव सामायिक पर अधिक बल दिया । आपके पास जो कोई आता, उससे आप पूछते कि वह सामायिक करता है या नहीं ? यदि नहीं करता तो उसे नित्य एक सामायिक या नित्य न हो सके तो कम से कम सप्ताह में एक सामायिक करने का नियम अवश्य दिलवाते ।

आज तो आचार्यश्री की कृपा से ग्राम-ग्राम, नगर-नगर, में सामायिक संघ की स्थापना हो चुकी है और जयपुर में अखिल भारतीय सामायिक संघ का

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

कार्यालय इन सभी संघों को शृंखलाबद्ध कर भाव सामायिक का एवं जीवन में सामायिक से परिवर्तन लाने का प्रचार-प्रसार कर रहा है। साधना के क्षेत्र में आचार्यश्री की यह भी एक महान् देन है।

हस्ती गुरु के दो फरमान ।
सामायिक स्वाध्याय महान ।।

साधुओं और स्वाध्यायियों के मध्य सन्तुलन-समन्वय बनाये रखने के लिये कुछ ऐसे लोगों के संगठन की आवश्यकता महसूस हुई जो साधना के क्षेत्र में प्रगति कर रह हों, जो अपनी गृहस्थ जीवन की मर्यादाओं के कारण साधु बनने में तो असमर्थ हैं, फिर भी अपना जीवन बहुत ही सादगी से, अनेक व्रत-नियमों की मर्यादाओं से, शास्त्रों के अध्ययन-अध्यापनपूर्वक साधना में बिताते हैं। ऐसे साधकों का एक साधक संगठन भी बनाया गया, जिसका मुख्य कार्यालय उदयपुर में श्री चाँदमलजी कर्णावट की देखरेख में चल रहा है। इस संघ की तरफ से वर्ष में कम से कम एक साधक-शिविर अवश्य लगता है जिसमें ध्यान, मौन, तप आदि पर विशेष प्रशिक्षण दिया जाता है। इन्दौर, जलगाँव और जोधपुर में इन शिविरों में मैंने भी भाग लिया और मुझे इनमें साधक जीवन के विषय में अनेक बातें सीखने को मिलीं और चित्त को बड़ी शांति प्राप्त हुई।

यों तो आचार्य प्रवर का पूरा जीवन ही साधनामय था किन्तु उन्होंने अपने अन्तिम जीवन से लोगों को आत्म-साक्षात्कार की शिक्षा भी सोदाहरण प्रस्तुत करदी। यह साधना के क्षेत्र में गुरुदेव की हम सबके लिये सबसे बड़ी देन है। वे देह में रहते हुए भी देहातीत अवस्था को प्राप्त हो गये। उन्होंने यह प्रत्यक्ष सिद्ध कर दिया कि शरीर और आत्मा भिन्न है। शरीर जड़ है, आत्मा चेतन है। शरीर मरता है, आत्मा नहीं मरती। जिसे यह भेदज्ञान हो गया है, वह निर्भय है। उसे मृत्यु से क्या भय ? उसके लिये मृत्यु तो पुराने बस्त्र का त्याग कर नये वस्त्र को धारण करने के समान है। उसके लिए मृत्यु तो महोत्सव है। समाधिमरणपूर्वक शरीर के मोह का त्याग कर, मृत्यु का वरण कर, गुरुदेव ने हमारे समक्ष देहातीत अवस्था का, भेदज्ञान का प्रत्यक्ष स्पष्ट उदाहरण प्रस्तुत कर दिया। यह साधना के क्षेत्र में गुरुदेव की सबसे बड़ी देन है।

साहित्य का क्षेत्र :

आचार्य प्रवर बहुत दूरदर्शी थे। जब उन्होंने देखा कि जैन धर्म की कोई उच्चकोटि की साहित्यिक पत्रिका नहीं निकलती जो गोरखपुर से निकलने वाले 'कल्याण' की तरह प्रेरक हो, तब उन्होंने भोपालगढ़ से **'जिनवाणी'** मासिक पत्रिका प्रारम्भ करने की प्रेरणा दी। यह पत्रिका दिनोंदिन प्रगति करती

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

गई । उसे भोपालगढ़ से जोधपुर लाया गया तब यह त्रिपोलिया में विजयमलजी कुम्भट के प्रेस में छपती थी और मैं इसका प्रबन्ध सम्पादक था । बाद में तो 'जिनवाणी' का सम्पादन डॉ० नरेन्द्र भानावत के सक्षम हाथों में जयपुर से होने लगा और इसने ऐसी प्रगति की कि आज यह जैन समाज में 'कल्याण' की तरह प्रतिष्ठित है । इसके 'कर्मसिद्धान्त' विशेषांक, 'अपरिग्रह' विशेषांक, 'जैन संस्कृति और राजस्थान' विशेषांक और अभी का 'श्रद्धांजलि विशेषांक' साहित्य जगत् में समादृत हैं । आज 'जिनवाणी' के हजारों आजीवन सदस्य बन चुके हैं देश में ही नहीं विदेश में भी । भारत के सभी विश्वविद्यालयों में यह पहुँचती है ।

गुरुदेव स्वयं जन्मजात साहित्यकार और कवि थे । उन्होंने 'उत्तराध्ययन' सूत्र का प्राकृत भाषा से सीधा हिन्दी भाषा में पद्यानुवाद किया है जो उनके कवि और साहित्यकार होने का बेजोड़ नमूना है । 'प्रश्नव्याकरण' सूत्र पर उन्होंने हिन्दी में टीका लिखी है । वे प्राकृत, संस्कृत, हिन्दी और गुजराती भाषाओं के विद्वान् थे । उनके व्याख्यान भी बहुत साहित्यिक होते थे । इसका प्रमाण **'गजेन्द्र व्याख्यान माला'** के सात भाग हैं । उन्होंने कई पद्य हिन्दी में लिखे हैं जो बहुत प्रसिद्ध हैं और अक्सर प्रार्थना सभा में गाये जाते हैं । इतना ही नहीं कि वे स्वयं साहित्यकार थे बल्कि उन्होंने सदैव कई लोगों को लिखने की प्रेरणा दी है । श्री रणजीतसिंह कूमट, डॉ० नरेन्द्र भानावत, श्री कन्हैयालाल लोढ़ा, श्री रतनलाल बाफना आदि कई व्यक्तियों ने अपनी 'श्रद्धांजलि' में यह स्वीकार किया है कि आचार्यश्री की प्रेरणा से ही उन्होंने लिखना प्रारम्भ किया था । स्वयं मुझे भी गुजराती से हिन्दी अनुवाद की ओर लेखन की प्रेरणा पूज्य गुरुदेव से ही प्राप्त हुई । उन्हीं की महती कृपा से मैं 'उपमिति भव प्रपंच कथा' जैसे महान् ग्रन्थ का अनुवाद करने में सफल हुआ । जिस व्यक्ति की गिरफ्तारी के दो-दो वारन्ट निकले हुए हों उसे वैरागी के रूप में आश्रय देकर उसे प्राकृत, संस्कृत, जैन धर्म और दर्शन का अध्ययन करवाना और लेखन की प्रेरणा देना गुरुदेव के साहित्य-प्रेम को स्पष्ट करता है । आचार्यश्री की कृपा से मुझे पं. दुःख मोचन जी झा से भी प्राकृत सीखने में काफी सहायता मिली किन्तु बाद में तो पंडित पूर्णचन्दजी दक जैसे विद्वान् के पास स्थायी रूप से रखकर जैन सिद्धान्त विशारद और संस्कृत विशारद तक की परीक्षाएँ दिलवाने की सारी व्यवस्था पूज्य गुरुदेव की कृपा से ही हुई । मात्र मुझे ही नहीं उन्होंने अपने जीवन में इसी प्रकार कई लोगों को लिखने की प्रेरणा दी थी । ऐसे थे साहित्य-प्रेमी हमारे पूज्य गुरुदेव !

साहित्यकारों को अपने साहित्य के प्रकाशन में बड़ी कठिनाई होती है । इसलिए आचार्यश्री की प्रेरणा से जयपुर में सम्यग्ज्ञान प्रचारक मंडल की

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

स्थापना हुई जिससे **'जिनवाणी'** के साथ-साथ आध्यात्मिक सत्साहित्य प्रकाशित होता है।

जैन विद्वानों का कोई संगठन नहीं होने से विद्वान् प्रकाश में नहीं आ रहे थे और उनकी विचारधारा से जन-साधारण को लाभ प्राप्त नहीं हो रहा था। अतः आचार्य प्रवर की प्रेरणा से जयपुर में डॉ० नरेन्द्र भानावत के सुयोग्य हाथों में अखिल भारतीय जैन विद्वत् परिषद् की स्थापना की गई जिसकी वर्ष में कम से कम एक विद्वत् संगोष्ठी अवश्य होती है। इससे कई जैन विद्वान् प्रकाश में आये हैं और ट्रैक्ट योजना के अन्तर्गत १०१ रुपये में १०८ पुस्तकें दी जाती हैं। इस योजना में अब तक ८३ पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं।

इसके अतिरिक्त स्वाध्यायियों को विशेष प्रशिक्षण घर बैठे देने के लिये आचार्यश्री की प्रेरणा से **'स्वाध्याय शिक्षा'** द्वैमासिक पत्रिका का प्रकाशन भी हो रहा है जिसमें प्राकृत, संस्कृत और हिन्दी विभाग हैं। इस पत्रिका में प्राकृत और संस्कृत पर अधिक बल दिया जाता है और प्रत्येक अंक में प्राकृत भाषा सीखने के नियमित पाठ प्रकाशित होते हैं।

गुरुदेव की प्रेरणा से अखिल भारतीय महावीर जैन श्राविका संघ की भी स्थापना हुई और महिलाओं में ज्ञान का विशेष प्रकाश फैलाने के लिए 'वीर उपासिका' पत्रिका का प्रकाशन मद्रास से प्रारम्भ हुआ जिसमें अधिकांश लेख मात्र महिलाओं के लिए ही होते थे।

आज के विद्यार्थी ही भविष्य में साहित्यकार और विद्वान बनेंगे अतः विद्यार्थियों के शिक्षा को उचित व्यवस्था होनी चाहिये। इसी उद्देश्य से भोपालगढ़ में जैन रत्न उच्च माध्यमिक विद्यालय और छात्रावास की स्थापना की गई जिससे निकले हुए छात्र आज देश के कोने-कोने में फैले हुए हैं। इस विद्यालय के परीक्षाफल सदैव बहुत अच्छे रहे हैं।

इतिहास का क्षेत्र :

इतिहास लिखने का कार्य सबसे टेढ़ा है क्योंकि इसमें तथ्यों की खोज करनी पड़ती है और प्रत्येक घटना को सप्रमाण प्रस्तुत करना होता है। फिर एक संत के लिए तो यह कार्य और भी कठिन है। प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थों और शिलालेख आदि को ढूंढ़ने के लिए प्राचीन मंदिरों, गुफाओं, ग्रन्थ भंडारों आदि की खाक छाननी पड़ती है जो एक सन्त के लिए इसलिए कठिन है कि वह वाहन का उपयोग नहीं कर सकता।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

फिर भी गुरुदेव ने इस कठिन कार्य का बीड़ा उठाया और उसे यथाशक्य प्रामाणिक रूप में प्रस्तुत किया। भगवान ऋषभदेव से लेकर वर्तमानकाल तक का प्रामाणिक जैन इतिहास लिखना कोई बच्चों का खेल नहीं था, किन्तु आचार्य प्रवर ने अपनी तीक्ष्ण समीक्षक बुद्धि और लगन से इस कार्य को पूरा कर दिखाया और करीब हजार-हजार पृष्ठों के चार भागों में जैन इतिहास (मध्य-काल तक) लिखकर एक अद्‌भुत साहस का कार्य किया है।

इस इतिहास-लेखन के लिए आचार्य प्रवर को कितने ही जैन ग्रन्थ भंडारों का अवलोकन करना पड़ा। कितने ही मंदिरों और मूर्तियों के अभिलेख पढ़ने पड़े। आचार्य प्रवर का गुजरात, महाराष्ट्र, कर्नाटक, तामिलनाडु, राजस्थान, मध्यप्रदेश, दिल्ली में जहाँ कहीं भी विहार हुआ, स्थान-स्थान पर प्राचीन ग्रन्थ भंडारों एवं मंदिरों में हस्तलिखित ग्रन्थों एवं शिलालेखों का शोधकार्य सतत चलता ही रहा। विश्राम करना तो पूज्य गुरुदेव ने सीखा ही नहीं था। सूर्योदय से सूर्यास्त तक निरन्तर लेखन कार्य, संशोधन कार्य आदि चलता रहता था।

इतना कठिन परिश्रम करने पर भी लोंकाशाह के विषय में प्रामाणिक तथ्य नहीं मिल रहे थे। अतः मुझे लालभाई दलपत भाई भारतीय शोध संस्थान अहमदबाद में लोंकाशाह के बिषय में शोध करने के लिए मालवणियाजी के पास भेजा। मैंने वहाँ लगातार छः महीने रहकर नित्य प्रातः १० बजे से ४ बजे तक अनेक हस्तलिखित ग्रन्थों का अवलोकन किया और श्री मालवणियाजी के सह-योग से लोंकाशाह और लोंकागच्छ के विषय में जो भी प्रमाण मिले, उनकी फोटो कापियां बनवाकर जैन इतिहास समिति, लाल भबन, जयपुर को भेजता रहा। इसी से अंदाज लगाया जा सकता है कि इतिहास लेखन का कार्य कितना श्रमपूर्ण रहा होगा। आचार्यश्री ने वह कार्य कर दिखाया है जिसे करना बड़े-बड़े धुरंधर इतिहासविदों के लिये कठिन था।

भावी पीढ़ी जब भी इस इतिहास को पढ़ेगी वह आचार्यश्री को उनकी इस महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक देन के लिए याद किये बिना नहीं रह सकेगी।

—१०/५९५, नन्दनवन नगर, जोधपुर

- मनुष्य को तात तप्त अवस्था से उबारना अखिलात्मा पुरुष की सबसे बड़ी साधना है।
- इतिहास मनुष्य की तीसरी आँख है।

—हजारीप्रसाद द्विवेदी

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org